भारतीय आविष्कारक की शक्ति
The Power of the Indian Inventor

एंजेला सैनी
Angela Saini
July 18, 2011

विविध प्रकार की भाषाओं में बोलने का आनंद ही यही है कि कभी-कभार आपके सामने कोई ऐसा शब्द भी आ जाता है जिसका असली अर्थ अनुवाद की प्रक्रिया में खो जाने का खतरा बना रहता है. हर भाषा में कुछ प्रच्छन्न अभिव्यक्तियाँ होती हैं, जिनमें उसकी संस्कृति की कुछ अनोखी और विशिष्ट बातें निहित होती हैं. जिस प्रकार जर्मन शब्द *schadenfreude* या फिर यीडिश शब्द *kvetch* है, उसी प्रकार भारत का अपना खास और दिलचस्प शब्द है, *जुगाड़.* इसका स्थूल अनुवाद होगा, "येन-केन-प्रकारेण कोई भी काम करवा देना", लेकिन इससे इसके सभी निहितार्थों के साथ न्याय नहीं हो पाएगा, जिनमें मक्कारी से लेकर होशियारी और नये आविष्कार तक अनेक निहितार्थ शामिल हैं. जो लोग सत्ता में हैं, उनके लिए *जुगाड़* सरकारी मशीन को चलाने के लिए रिश्वत रूपी तेल हो सकता है. आर्थिक संकटों से घिरे एक गृहस्थ के लिए अस्थायी रूप में किसी समस्या का हल निकालना ही जुगाड़ करना है. लेकिन विज्ञान और प्रौद्योगिकी के संदर्भ में इसका अक्सर मतलब होता है किसी तात्कालिक आवश्यकता की पूर्ति के लिए फटाफट कोई तदर्थ समाधान ढूँढ निकालना.

लेकिन बाद में एक ऐसी परिभाषा निकल आयी है, जो मेरे जैसे विज्ञान के पत्रकारों के लिए सचमुच ही हैरत अंगेज़ है. अपनी पुस्तक "गीक नेशन" के लिए साक्षात्कार लेते समय वैज्ञानिकों ने बताया कि संसाधनों या निधि की कमी के कारण वे व्यावसायिकों की सेवा का उपयोग करने के बजाय अपनी प्रयोगशाला के उपकरणों को खुद ही बनाते हैं या खुद ही उनकी मरम्मत करना पसंद करते हैं या फिर वे दूसरी प्रयोगशालाओं के साथ अपनी सुविधाएँ साझा करते हैं.
भारत के शोधकर्ता कमज़ोर बुनियादी ढाँचे के कारण आविष्कार करने के लिए विवश होते हैं. लेकिन वैज्ञानिकों से निचले दर्जे के जड़ों से जुड़े ज़मीनी स्तर के लोग जुगाड़ करते रहते हैं. जुगाड़ में लगे इन तकनीशियनों की जीवंत संस्कृति दिखाई पड़ती है. हज़ारों ही नहीं , लाखों की संख्या में शौकिया आविष्कारक भारत- भर में फैले हुए हैं. उनकी शिक्षा भी प्रारंभिक स्तर की है. ये लोग अपने स्थानीय समुदाय के लिए उपकरण बनाने में जुटे रहते हैं या फिर बड़ी से बड़ी परियोजना को अंजाम देने में अकेले ही लगे रहते हैं.
हाल ही में मैंने मुंबई के एक व्यापारी से बात की, जो ले इंजीनियर था और अपना फालतू समय अपने स्थानीय अस्पताल के लिए सौर ऊर्जा से चलने वाले एयर

कंडीशनिंग यूनिट को डिज़ाइन करने में लगाता था. (यह यूनिट उसी सिद्धांत पर चलता था, जिस पर कोई फ्रिज चलता है, गर्म ऊर्जा को संचित किया जाता था, जो सूर्य के सामने रखे गए बड़े प्रतिक्षेपक पैनलों की मदद से सिस्टम को चलाते थे). और उत्तर भारतीय राज्य पंजाब में तो आपको घर पर ही बनाये गये कितने ही प्रकार के ऐसे ट्रक मिल जाएँगे, जिन्हें जुगाड़ू प्रक्रिया से बनाया गया है और जिनका नाम भी जुगाड़ ही रखा गया है.
लगभग दो दशक पहले भारतीय प्रबंधन संस्थान के प्रोफ़ेसर अनिल गुप्ता ने ऐसे हज़ारों उदाहरणों को इकट्ठा करके ज्ञान साझा करने का एक प्लेटफ़ॉर्म बनाया था, जिसे हनी बी नेटवर्क नाम दिया गया था अर्थात् मधुमक्खियों का नेटवर्क. अब इसे सरकार के राष्ट्रीय नवोन्मेष प्रतिष्ठान से जोड़ दिया गया है. यह प्रतिष्ठान इस प्रकार के कामों को व्यावसायिक बनाने के लिए मदद करता है. ऐसे नवोन्मेषकारी कामों की सूची में पैडल से चलने वाली वाशिंग मशीन, प्याज बोने की स्वचालित मशीन और फ़ोल्डेबल सीट को डबल करने वाली बैसाखी, हैडलाइट, अलार्म और छाता स्टैंड भी शामिल है.

राष्ट्रीय नवोन्मेष प्रतिष्ठान द्वारा संकलित निर्मितियों की व्यापकता और आकांक्षाएँ इस बात का प्रमाण हैं कि भारत में नवोन्मेष एक प्रकार की सांस्कृतिक परंपरा है. पिछले अनेक दशकों में यह इतनी व्यापक हो गई है कि मेरे माता-पिता जो सत्तर के दशक में भारत से आकर लंदन में बस गये थे, आज भी पुरानी चीज़ों के स्थान पर नई चीज़ें खरीदने के बजाय उन्हें ही जोड़-तोड़ कर काम चलाना पसंद करते हैं. मेरे पिता जी ने अपना काम खुद ही करने की आदत के कारण अपने बगीचे के लिए लकड़ी का एक डेक बनाया और मेरी माँ मेरे बचपन से लेकर आज तक खुद ही मेरे कपड़े सीना पसंद करती हैं.

यह परंपरा हर उस समाज में प्रचलित होगी जहाँ संसाधनों की कमी रहती है. अफ्रीकी देशों में भी गाँव-गाँव में मिट्टी के बर्तनों के फ्रिज से लेकर बारिश के पानी के हारवेस्टर तक इस प्रकार के नवोन्मेषों के किस्से मशहूर हैं. चालीस के दशक में युद्ध के समय ब्रिटेन में गृहिणियों ने बहुत कुशलता से तरह-तरह के व्यंजन और परिधान बनाये थे. आज इस प्रकार के जड़ों से जुड़े ज़मीनी स्तर पर बने गैजेट आकर्षण का केंद्र बन गये हैं और अमरीका में तो हैकर और मेकर समुदायों ने मिलकर एक प्रति सांस्कृतिक आंदोलन चला रखा है जो इलेक्ट्रॉनिक्स के पुराने साजो-सामान को ठीक-ठाक करके मँहगी चीजों के विकल्प के रूप में इन्हें डिस्पोज़ेबल बनाकर बाज़ार में लाने लगे हैं.

भारत में जुगाड़ से न तो जीवन सुविधाजनक होता है और न ही इसे फ़ैशनेबल माना जाता है. जड़ों से जुड़े और ज़मीनी स्तर के इन इंजीनियरों और वैज्ञानिकों को सशक्त आर्थिक संसाधन के तौर पर समझा जाता है. पैडल चालित वाशिंग मशीन बनाने की जुगाड़ की किफ़ायती भावना से प्रेरित होकर ही बेहद कम लागत की और बेहद लोकप्रिय टाटा नैनो कार तैयार की गयी थी, सौदेबाजी पर आधारित आईटी आउटसोर्सिंग और यहाँ तक कि कम लागत के अंतरिक्ष कार्यक्रम की सफलता भी इसी से प्रेरित थी. उदाहरण के लिए, भारतीय अंतरिक्ष संगठन के परियोजना निदेशक श्री एन. नारायण मूर्ति ने कहा था कि जब नासा के एक अधिकारी ने देखा कि भारतीय कितने कम बजट में इतनी बड़ी उपलब्धि हासिल कर रहे हैं तो वह अवाक् रह गया.

हमारे कहने का यह आशय नहीं है कि जुगाड़ हमेशा ही कोई अच्छी चीज़ है. यदि आवश्यकता आविष्कार की जननी है तो नई प्रौद्योगिकी की नितांत आवश्यकता और संसाधनों की कमी जब एक साथ होती है तो सस्ती जोड़-तोड़ की चीज़ें भी बनने लगती हैं. भारत के वैज्ञानिक प्रकाशनों की दर योरोप,अमरीका, ऑस्ट्रेलिया,जापान और अब चीन से भी सचमुच पीछे है. सही विज्ञान को फालतू ज्ञान से अलग करने और छल-कपट के हर मामले की छान-बीन करने के लिए कोई सशक्त वैज्ञानिक प्राधिकरण नहीं है. और सबसे बढ़िया स्तर का शोधकार्य तो पैंसठ साल पुरानी टाटा इंस्टीटयूट ऑफ़ फ़ंडामेंटल रिसर्च जैसी कुछेक प्रतिष्ठित प्रयोगशालाओं तक ही सीमित रह गया है.

भारत में सच्चे अर्थों में शोध-कार्य को बढ़ावा देने के लिए बुनियादी ढाँचे में सुधार होना चाहिए और आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पर्याप्त निधि उपलब्ध कराई जानी चाहिए, जैसा कि चीन में किया जा रहा है. इस दिशा में प्रयास शुरू कर दिये गये हैं और भारत सरकार शोध और विकास पर खर्च किये जाने वाले सकल घरेलू उत्पाद अर्थात् जीडीपी को दुगुना करने के लिए प्रतिबद्ध है. बड़ी-बड़ी फ़र्मास्युटिकल और आई टी बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने भी बेगलोर, चेन्नई और हैदराबाद जैसे शहरों में नये और बड़े केंद्र स्थापित करने शुरू कर दिये हैं. और अंततः माइक्रोसॉफ्ट और आईबीएम की तरह भारतीय सॉफ्टवेयर कंपनियाँ भी एक प्रकार का लाभ अर्जित करने लगी हैं, जिसके कारण वे अब मूलभूत शोध पर अधिकाधिक निवेश करने लगी हैं. भारत सरकार को उम्मीद है कि एक दिन ऐसा आएगा जब भारत भी अमरीका के समान उसी वैज्ञानिक लीग में अपना स्थान बना सकेगा. लेकिन सच तो यह है कि इस दिशा में हमारी रफ़्तार बहुत धीमी है और भारत को बस जुगाड़ ही करना होगा.

एंजेला सैनी लंदन में बसी एक पुरस्कार-विजेता वैज्ञानिक हैं. उनकी पुस्तक "गीक नेशनः हाउ इंडियन साइंस इज़ टेकिंग ओवर" हॉडर द्वारा वसंत, 2011में प्रकाशित की गई थी.

हिंदी अनुवादः विजय कुमार मल्होत्रा, पूर्व निदेशक (राजभाषा),
रेल मंत्रालय, भारत सरकार <malhotravk@hotmail.com>